छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर (छ.ग.)

रिट याचिका संख्या 2466/2004

पक्षकार

याचिकाकर्ता : राजेन्द्र सिंह ठाकुर
आयु – 46 वर्ष
पिता – श्री मन्नू सिंह ठाकुर
शासकीय कन्या उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, कांकेर
पी.टी.आई के रूप में पदस्थ
निवासी – कांकेर,
जिला – कांकेर (छ.ग.)

विरुद्ध

- उत्तरवादीगण: .

1. छत्तीसगढ़ राज्य,
द्वारा– सचिव,
अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित
जनजाति मंत्रालय, डी.के.एस.
भवन रायपुर

2. आयुक्त,
जनजातीय एव जाति विकास,
छत्तीसगढ़, रायपुर

3. सहायक आयुक्त,
अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजातीय विकास,
जगदलपुर

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 एवं 227 के अंतर्गत रिट याचिका, जिसमें परमादेश, प्रतिषेध, उपयुक्त निर्देश अथवा निर्देश, आदेश अथवा आदेशों के निर्गमन हेतु प्रार्थना की गई है।

प्रकाशन हेतु अनुमोदित

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

रिट याचिका 2466 सन 2004

19.01.2005

श्री आर.एस. पटेल, याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता।

श्री सतीश गुप्ता, उप शासकीय अधिवक्ता, राज्य/उत्तरवादिगणों के लिए, अग्रिम प्रति प्राप्त होने के आधार पर।

—— श्रवण किया

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

संविधान के अनुच्छेद 226/227 के तहत दायर इस वर्तमान रिट याचिका द्वारा, याचिकाकर्ता उत्तरवादिगण संख्या 2 द्वारा दिनांक 15/12/2003 (अनुलग्नक–पी/1) को पारित आदेश की वैधता, विधिमान्यता और औचित्य को चुनौती दी है, जो मध्य प्रदेश सिविल सेवा (वर्गीकरण, नियंत्रण और अपील) नियम, 1966 के नियम 29 के तहत पुनर्विलोकन के लिए प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए जारी किया गया था।

याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने तर्क प्रस्तुत किया हैं कि प्रासंगिक समय पर, याचिकाकर्ता शासकीय बालक उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, चारामा, जिला बस्तर (छ.ग.) में पी.टी.आई. के रूप में कार्यरत था। वह दिनांक 08/07/1991 से बहुत लंबे समय (लगभग तीन वर्ष) तक अपने कर्तव्य से अनुपस्थित रहा। उक्त कृत्य पर उसके विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही प्रारंभ की गई और उक्त अनुशासनात्मक कार्यवाही में, याचिकाकर्ता को दिनांक 14/10/1993 को नोटिस के साथ आरोप–पत्र जारी किया गया। यह एक स्वीकृत स्थिति है कि उपर्युक्त नोटिस और आरोप–पत्र की तामील के बाद भी, याचिकाकर्ता ने उसका कोई जवाब दाखिल नहीं किया और कार्यवाही में भाग नहीं लिया था। तत्पश्चात जांच का आदेश दिया गया और जांच के बाद, अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने, नियमों के आवश्यक अनुपालन के उपरांत, दिनांक 21/06/1999 (अनुलग्नक–पी/4) को दंड आदेश पारित किया। तदनुसार, उक्त दंडादेश में तीन वार्षिक वेतनवृद्धियाँ संचयी प्रभाव से रोक दी गईं और

अनुपस्थिति की अवधि को पेंशनरी लाभों आदि के प्रयोजनों के लिए अकार्य दिवस के रूप में माने जाने का निर्देश दिया गया। यह भी एक स्वीकृत स्थिति है कि याचिकाकर्ता ने उक्त दंडादेश के विरुद्ध कोई अपील दायर नहीं की और उसने एक पुनर्विलोकन याचिका दायर की। उत्तरवादी क्रमांक 2 ने उसकी पुनर्विलोकन याचिका को स्वीकार करने के बाद दिनांक 15/12/2003 को आक्षेपित आदेश पारित किया और विभिन्न उपचारों पर खारिज कर दिया। पुनर्विलोकन प्राधिकारी ने इस तथ्य को ध्यान में रखा कि दिनांक 14/10/1993 के कारण बताओ नोटिस के बाद भी, याचिकाकर्ता अनुशासनात्मक प्राधिकारी के समक्ष उपस्थित नहीं हुआ और उसके दोषी ठहराए जाने के बाद जब कोई अभ्यावेदन मांगा गया, तो याचिकाकर्ता ने कोई अभ्यावेदन प्रस्तुत नहीं किया और उसके बाद ही उसके विरुद्ध आक्षेपित दंड आदेश पारित किया गया। विद्वान अधिवक्ता आगे प्रस्तुत करते हैं कि अनुशासनात्मक प्राधिकारी के साथ–साथ पुनरीक्षण प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश विधि के अनुरूप नहीं हैं और उन्हें अपास्त किया जाए।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

मैंने संबंधित प्राधिकारियों द्वारा पारित आदेशों का अवलोकन किया

इस न्यायालय की राय में, यह ऐसा उपयुक्त मामला नहीं है जिसमें न्यायालय भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत अपनी शक्ति का प्रयोग कर सके। सर्वोच्च न्यायालय ने एस्ट्राला रबर बनाम दास एस्टेट (प्रा.) लिमिटेड के मामले में जो (2001) 8 एस.सी.सी.97 में प्रकाशित है ये दिए गए निर्णय में यह सिद्धांत प्रतिपादित किया है कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत शक्ति का प्रयोग करने में उच्च न्यायालय का कर्तव्य है कि वह अधीनस्थ न्यायालयों और अधिकरण (ट्रायब्युनल) को उनके अधिकार क्षेत्र को सीमाओं के भीतर रखे और यह सुनिश्चित करे कि वे विधिक तरीके से अपेक्षित या आवश्यक कर्तव्य का पालन करें। यह भी माना गया है कि उच्च न्यायालय को अधीनस्थ न्यायालयों या न्यायाधिकरणों के क्षेत्राधिकार की सीमाओं के भीतर किए गए सभी प्रकार की कठिनाइयों या गलत निर्णयों को ठीक करने के लिए कोई असीमित विशेषाधिकार प्राप्त नहीं है। वास्तव में, इस शक्ति का प्रयोग कर्तव्य के प्रति गंभीर लापरवाही और विधि या न्याय के मौलिक सिद्धांतों के घोर उल्लंघन के मामलों तक ही सीमित है। यह भी ध्यान रखना चाहिए कि इस अनुच्छेद के तहत कार्य करते हुए उच्च न्यायालय एक अपीलीय न्यायालय के रूप में अपनी शक्ति का प्रयोग नहीं कर सकता है और अधीनस्थ

न्यायालय के निर्णय के स्थान पर अपना स्वयं का निर्णय प्रतिस्थापित नहीं कर सकता है ताकि किसी त्रुटि को सुधारा जा सके, जो अभिलेख से स्पष्ट नहीं है।

सर्वोच्च न्यायालय के सुगरबाई एम. सिद्दीकी और अन्य बनाम रमेश एस. हन्कारे के मामले में (2001) 8 एस.सी.सी 477 में दिये गये निर्णय का भी उल्लेख किया जा सकता है, जिसमें सर्वोच्च न्यायालय ने कहा है कि संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत एक आवेदन में, उच्च न्यायालय को यह देखना होगा कि क्या अधीनस्थ न्यायालय / न्यायाधिकरण को मामले में कार्यवाही करने का क्षेत्राधिकार है और यदि हां, तो क्या आक्षेपित आदेश प्रक्रियात्मक अनियमितता से दूषित है; दूसरे शब्दों में, न्यायालय निर्णय का सरोकर नहीं बल्कि केवल निर्णय लेने की प्रक्रिया से होता है।

वर्तमान मामले में इन विधिक के सिद्धांतों को लागू करते हुए, मुझे पुनर्विलोकन प्राधिकारी या अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा पारित आदेशों में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं मिलता है, विशेष रूप से मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में जब याचिकाकर्ता दो बार अनुशासनात्मक प्राधिकारी के समक्ष अपना जवाब दाखिल करने के लिए उपस्थित नहीं हुआ, पहली बार कारण बताओ नोटिस जारी करते समय और दूसरी बार दंड अधिरोपण के समय/याचिका में कोई सार नहीं है और इसलिए इसे प्रारंभिक स्तर पर ही खारिज किया जाता है।

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

हस्ताक्षरित /—

सुनील कुमार सिन्हा

न्यायाधीश

अस्वीकरणः हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा । समस्त कार्यालयीन एवं व्यवहारिक प्रयोजनों हेतु **निर्णय का अंग्रेजी स्वरुप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।**

Translated By Ms Mamta Gupta Adv

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur